सर्वेश्वर का काव्य वैशिष्ट्य: "खूँटियों पर टँगे लोग" काव्य-संग्रह के संदर्भ में

■ डा. रवींद्र नाथ मिश्र

समकालीन कविता के कवियों में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का विशिष्ट स्थान है । इनकी कविताओं में मध्यवर्गीय एवं आम आदमी के जीवन की पीड़ा के साथ ग्रामीण और शहरी संस्कृति का समावेश भी है । गांधी, लोहिया और मार्क्स से प्रभावित सक्सेना जी अंतत: जनवादी विचारधारा की ओर मुड़ जाते हैं । बहुमुखी प्रतिभा के धनी सक्सेना जी ने साहित्यिक जीवन की शुरूआत कहानियों से की और १९५० तक कहानियाँ ही लिखते रहे । कविता की ओर झुकाव सन ५० के बाद ही हुआ । तीसरे सप्तक में शामिल होने के बाद सक्सेना जी ने नए कवियों की टोली में पदार्पण किया । इसके पश्चात् 'काठकी घंटियाँ', 'बॉस का पुल', 'एक सूनी नाव', 'गर्म हवाएँ' 'कुआनो नदी', 'जंगल का दर्द' और 'खूँटियों पर टँगे लोग' आदि काव्य-संग्रह प्रकाशित हुए । इनकी रचनाओं में प्रेम, करुणा, वात्सल्य, सहजता, सहानुभूति, व्यंग्य, विद्रोह, आक्रोश, खीझ और क्रांति आदि के स्वर मिलते हैं । इनमें व्यापक जनचिंताओं के साथ मध्यवर्ग के प्रति विशेष आकर्षण है और स्वाभिमान के साथ जीवन जीने की पुकार भी निहित है ।

सर्वेश्वर अज्ञेय जी से प्रभावित हैं, पर वे दुर्बोध कवि नहीं हैं । ये प्रगतिशील और नई कविता की उपज हैं, लेकिन इनकी भाषा, कथा और कविता संसार के अन्य कवियों से भिन्न है ।

दिल्ली प्रवास के दौरान सर्वेश्वर ने पत्रकार की भूमिका का निर्वाह करते हुए राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार को बहुत निकट से देखा । 'दिनमान' का 'चरचे और चरखे' स्तंभ उन दिनों काफी लोकप्रिय था । इसका परिणाम यह रहा कि प्रारंभिक संवेदनात्मक अनुभूतियाँ, नफरत, क्रोध और आक्रोश में बदल गईं । कवि के अंदर सामाजिक सत्य तक पहुँचने और उसे अभिव्यक्त करने की जबरदस्त छटपटाहट रही है और इसी कारण सर्वेश्वर जी जीवन और कविता के बीच सांस्कृतिक रिश्ते को समझ पाने में सफल रहे हैं । इनके काव्यसंग्रहों में उतार-चढ़ाव की स्थिति मौजूद रही है । पुराने काव्य संस्कार उन पर बार-बार हावी होते हैं और उनसे मुक्त होने में उन्हें काफी श्रम करना पड़ा, क्योंकि वे सांस्कृतिक कर्मी के दायित्व का निर्वाह करते रहे । इसके साथ ही वे राजनीतिक सामाजिक बदलाव से अपने आप को जोड़ते हुए कविता की सामाजिक भूमिका को भी समझाते रहे हैं ।

पुराने काव्य संस्कारों से मुक्त होने के बाद ही सक्सेना जी 'खूँटियों पर टँगे लोग' काव्य संग्रह का सर्जन करने में कामयाब हुए। इस संग्रह तक आकर इनके लेखन की धार पैनी हो गई है। १९८२ में प्रकाशित इस काव्य-संकलन में १९७६-८१ तक की कविताएँ संकलित हैं। इसमें कवि ने देश, परिवेश, समाज और राजनीति से आँखें मूंदकर चलने वालों को आँखें खोलकर चलने के लिए मजबूर किया है। इसके साथ ही सामाजिक समस्याओं की मूल पीड़ा के साथ एकरूप होने के लिए विवश भी किया है।

सक्सेना जी ने सामाजिक जीवन-संदर्भों और उसकी वास्तविकताओं से अपने पाठकों को परिचित कराया है। 'कोट' शीर्षक कविता में खूँटियों पर टँगे हुए कोट की तरह इंसान को वे टँगा हुआ ही देखते हैं।

खूँटी पर कोट की तरह एक अरसे से मैं टँगा हूँ
कहाँ चला गया
मुझे पहनकर सार्थक करने वाला ?
धूल पर धूल
इस कदर जमती जा रही है
कि अब मैं खुद
अपना रंग भूल गया हूँ। (पृष्ठ- २०)

कवि का विचार है कि 'कोट' की सार्थकता उसके पहने जाने में है। तभी उसे संपूर्णता और उष्मा का एहसास होता है। वह खूँटी पर टँगने की संज्ञाहीन आजादी नहीं चाहता। उसका अपनत्व और लगाव उस इंसान से है, जो भूकंप लानेवाली ताकतों की खोज में बाहर गया है। उसकी सुरक्षा के लिए कोट चाहता है–

उसकी हर चोट मेरी हो
उसका हर घाव पहले मैं झेलूँ
उसका हर संघर्ष मेरा हो
मैं उसके लिए होऊँ
इतना ही मेरा होना हो। (पृष्ठ- २२)

संपूर्ण काव्य-संग्रह तीन खंडों में विभाजित है। प्रथम खंड की कविताओं में 'कोट', 'स्वेटर', 'मोजा', 'दस्ताने', 'जूता', 'पोस्ट मार्टम की रिपोर्ट', 'आपत्काल', 'उंगलियों में चुभे कांटे', 'तानाशाही से लड़ती एक कवयित्री' आदि कविताएँ प्रतीक के रूप में युग की चुनौतियों से टकराकर क्रांति, विद्रोह और विरोध का रूप धारण करती हैं। इनमें लोकभूमि के खुरदरापन के प्रति सहानुभूति और आभिजात्य वर्ग की भूमि के चिकनेपन के प्रति आक्रोश है। इनमें कुछ आत्मपरक कविताएँ भी हैं जिनमें कवि अपनी व्यथा कथा कहता है। 'तसल' कविता में सर्वेश्वर जी आत्ममूल्यांकन के साथ क्रांति में अपनी भूमिका को परखते हैं।

हम तो जमीन ही तैयार कर पाएँगे।
क्रांति बीज बोने कुछ बिरले ही आएँगे।

हरा भरा वही करेंगे मेरे श्रम को,

सिलसिला मिलेगा आगे मेरे क्रम को। (पृष्ठ- १८)

'मोजा' कविता में वे समय और समाज की उपेक्षा करके अपने निजी स्वार्थ की सीमाओं में जीने वाले इंसान को सोचने और आत्म विश्लेषण करने पर मजबूर करते हैं। 'कोट' की तरह 'मोजा' भी अपने दायित्व को समझाता है।

मैं उन पैरों के साथ रहूँ

उन्हें गर्म रखूँ

और जूते के कठोर स्पर्श को

खुद झेल लूँ

उन पैरों तक न आने दूँ। (पृष्ठ- २८)

कवि ने निर्जीव दस्तानों के बहाने शोषकों की क्रूरता और बर्बरता के खिलाफ शोषितों को ललकारा है।

लेकिन याद रखो -

अन्याय और यातना की सीमा

जब पार हो जाती है

तो बेजान में ही सबसे पहले जान आती है। (पृ. ३१)

ये रचनाएँ मानवीय सदाशयता और सामाजिक आशय की गहरी पकड़ के साथ प्रतीकों और बिंबों में अद्वितीय हैं।

सर्वेश्वर जी जुलूस, हड़ताल, और आंदोलनों में स्वयं भाग लेते थे। उनका कहना था कि हम जानते हैं कि हमारे देश में किसानों को बेजान के समान देखा गया है। उन्हें विश्वास है कि अब तुम बच नहीं सकते। बहुत देर हो चुकी है, क्योंकि उन्होंने बहुत पहले से ही अपने बाएँ पैर पर ज्यादा वजन डालना शुरू कर दिया था।

मैं बाएँ पैर पर ज्यादा वजन डालने लगा हूँ

बात यह है

कि दाहिने पैर की तकलीफ टालने लगा हूँ। (पृष्ठ- ३३)

'जूता'- १ से ५ तक की छोटी कविताएँ आम जीवन की दशा का चित्रण करती है। इसमें आर्थिक विपन्नता, आक्रोश, साहस, विद्रोह और प्रेम को व्यंग्यात्मक रूप में चित्रित किया गया है।

कवि का आजादी से मोहभंग हो चुका है, इसलिए उसे लोकतांत्रिक अधिकारों के लिए लड़नेवाली व्यापक जनता के साथ और शोषकवर्ग के विरुद्ध खड़ा होने के अतिरिक्त और कोई रास्ता ही नहीं दिखाई देता। कवि ने उन तमाम लोकतांत्रिक और जुझाऊ शक्तियों को ललकारा है—

आहिस्ता मत चलो

दौड़ो

ज्यादा सोचना भय को निमंत्रण देना है
और धीरे चलना अवसर चूक जाना।
मैं जानता हूँ तुम्हारे हाथों में
अभी कोई झंडा नहीं है,
भूखे और असहाय आदमी को
किसी झंडे की जरूरत भी नहीं होती। (पृष्ठ- ३९)

कवि शोषक प्रवृत्तियों से मुक्ति पाना चाहता है। इसके लिए वह सर्वहारा वर्ग को क्रांति का संदेश देता है 'उंगलियों में चुभे काँटे' नामक कविता में कवि उद्‌बोधनात्मक शैली में दलितों को आवाज देता है —

ऊँची, सीधी, चिकनी है
दीवार
ऊपर कँटीले तार
लेकिन करना ही है
उसे पार
बाहर भूखे चेहरों का इंतजार!
गाओ
आग की लपटो, गाओ
बेधो सन्नाटे को आर-पार! पृष्ठ - ४१)

"तानाशाही से लड़ती एक कवयित्री" कविता में सक्सेना जी आजादी की तलाश आजादी के बाद हुए जुल्मों के नक्शों पर करते हैं। इसके लिए वे जहरीले सर्प रूपी शोषकों के जहरीले दांतों को तोड़ देना चाहते हैं जिसके बल पर वे इतराते हैं।-

यही है वह जहरीली थैली
जिससे इन्सानियत को निपटना है
जिसके बूते पर
हर तानाशाह इतराता है।
लो, इसे तोड़ो। (पृष्ठ- ५३)

इनके द्वारा अन्याय और अत्याचार देश में जहरीली गैस की भाँति उसी प्रकार फैल रहा है, जिस प्रकार बरसात में भयावह अंधकार। कवि कहना चाहता है कि इस बरसाती अंधकार को हम सबको एक दूसरे का छाता और टार्च बनकर पार करना है।आवश्यकता इस बात की है कि हम संगठन के महत्व को समझे और मूल्यों को स्थापित करने के लिए प्रतिबद्ध हों।

प्रौढ़ शिक्षा- १ और २ कविता सरकार की कागजी योजनाओं की निरर्थकता का भंडा फोड़ करती है। इस शिक्षा पर व्यय होनेवाली तमाम धनराशि के प्रति चिंता व्यक्त करते हुए कवि कहता है—

खड़िया, ब्लैकबोर्ड,

कलम- दावातत,
तख्ती, स्लेट, पेंसिल, कापी, किताब-
जब आए तब आए,
अभी तो इसी कोयले से लिखो।

इस प्रकार की अनेक योजनाओं पर सरकार पानी की तरह पैसा बहा रही है। 'रग तरबूजे का' और 'देशगान' कविता में सर्वेश्वर जी जिन आदर्शों और मूल्यों की स्थापना के लिए संघर्ष करते हैं आजादी के बाद वे उन्हें बिखरे हुए नजर आते हैं, क्योंकि इसके जिम्मेदार हैं देश के नेता। कवि ने लोकशैली में बड़ा कटु व्यंग्य किया है।

रो- गाकर आजादी लाए
पहन लंगोटी खादी,
चार कदम भी चल नहीं पाए
इतनी चढ़ गई बादी।
रंग तरबूजे का
महक खरबूजे की।
अमरीका में डांस करें
औ रुक्षस में मारे कुश्ती। पृष्ठ- ७२

इस खंड की कविताओं में कवि ने मानवीय त्रासदी के बीच सही व्यवस्था की तलाश की है। समसामयिक सच्चाइयों से जुड़कर विघटित मूल्यों के बीच सार्थक जिंदगी की खोज करती हैं। 'देशगान' कविता में सक्सेनाजी का बहुत सीधा और अकुलाहट भरा प्रश्न है।

प्रश्न जितने बढ़ रहे हैं
घट रहे उतने जवाब
होश में भी एक पूरा देश यह बेहोश हैं।
खूँटियों पर ही टँगा
रह जाएगा क्या आदमी ?
सोचता, उसका नहीं यह खूंटियों का दोष है। पृष्ठ - ७३

वास्तविक रूप से ये खूंटियाँ अमानवीय जिंदगी की शोषक स्थितियों को बेनकाब करती हैं, जो ठीक से जीने भी नहीं देती और मरने भी नहीं देती।

दूसरे खंड की कविताओं में कवि ने क्रांति- चेतना के स्थान पर प्रेम संबंधी निजी अनुभूतियों को अभिव्यक्ति दी है। जिसमें दुःख, करुणा और वेदना का स्वर प्रधान है इसके लिए कवि प्रकृति का सहारा लेता है। इसमें कुछ कविताएँ विशिष्ट व्यक्तियों से संबंधित हैं। 'दुःख' कविता में कवि दुख के विविध रूपों में चित्रित करता है।

दुख है मेरा
सफेद चादर की तरह निर्मल
उसे बिछाकर सो रहता हूँ।
दुख है मेरा
सूरज की तरह प्रखर

उसकी रोशनी में

सारे चेहरे देख लेता हूँ । (पृष्ठ - ७७)

प्रेम से संबंधित कविताओं में 'पिछली शाम' कविता में प्रेम का आधुनिक रूप दर्शाया गया है। इसमें तुम एक विशेष स्त्री हो जिसकी अवस्था ढल रही है और जो मैं की उपेक्षा करके किसी ऐसे पुरुष की ओर उन्मुख हो गई है जो उसकी मुट्ठी में रह सकता है। कवि बिंबों और प्रतीकों के सहारे प्रेम के अनुभव को पकड़ने में सफल रहा है।

सर्वेश्वर की व्यक्तिगत रचानाएँ भी स्वस्थ सामाजिक जीवन को लेकर चलती हैं। कवि प्यारभरी दृष्टि को मशाल की तरह जलाकर उसके प्रकाश में शोषकों के सही- सही चेहरे की तलाश करता है। 'चलो घूम आएँ' और 'अच्छा हुआ तुम बाहर आ गई' कविता में उपर्युक्त भाव द्रष्टव्य हैं। 'मैं सूरज को नहीं डूबने दूँगा' कविता मानवीय अवमाननां के ख़िलाफ़ मुक्ति का संदेश देती है।

इस संग्रह के अंतिम खंड में दो लंबी कविताएँ हैं। इसमें कवि पुनः व्यक्ति से समष्टि की ओर उन्मुख हुआ है। इन दोनों कविताओं में चीनी लेखक 'लू शुन' को एक पात्र के रूप में लिया गया है। 'गांव का सपेरा' कविता में कवि 'लू' के माध्यम से पिछले चालीस वर्षों में भारतीय गांवों में आए परिवर्तन को दिखाता है।

दूसरी कविता 'लू शुन और चिड़ियाँ' गद्यात्मक है। इसे पढ़कर कविता का बोध नहीं होता। इसपर विवाद भी है। इसमें चिड़ियाँ भारतीय जनसाधारण का प्रतीक हैं और 'लू शुन' (यानी लू शून की विचारधारा) उन्हें भयमुक्त होने की शिक्षा दे रहे हैं। उनका कहना है कि किसी भी बंदूक में इतनी गोलियाँ नहीं होतीं जो कि करोड़ों का सफाया कर दें। आवश्यकता इस बात की है कि हम सब संगठित होकर अन्याय और अत्याचार का विरोध करें।

सर्वेश्वर की भाषा पर विचार करें तो साफ जाहिर होता है कि इन्होंने भाषा में रहस्य पैदा करने की कोशिश नहीं की है। सरलतम नई भाषा के प्रति सदैव सचेत रहे हैं। व्यक्तिगत, सामाजिक और राजनीतिक मूल्यों के संदर्भ में भाषा कभी संकट का कारण नहीं बनी। हिंदी कविता को भाषा का जो कलेवर सर्वेश्वर ने दिया वह कहीं- कहीं नागार्जुन के कलेवर से मिलता है। वे जीवन व्यापार की भाषा के प्रयोग में माहिर हैं। इसी में उनका अपना लगाव और लय भी है। आक्रोशभरी वाणी पर भी भाषा की शिष्टता पर आँच नहीं आती। अपने आक्रोश को व्यक्त करने के लिए कवि उस प्रकार की भाषा का प्रयोग नहीं करता, जिस प्रकार की भाषा का उपयोग सातवें दशक के कवियों ने किया है। सक्सेना जी के काव्यशिल्प का मुख्य आकर्षण उनका उपमाविधान, बिंबविधान और प्रतीक विधान है। इनमें अधिकांशतः नवीनता का समावेश है।

कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि इस संग्रह की कविताओं में वैचारिक खुलापन है। व्यक्ति को संघर्षमय बनाने की उद्घोषणा है। मानवीय मूल्यों को तोड़ने वाले मूल्यों के प्रति खीझ है और लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति समर्पित भावना का उद्घोष है।

* * *